DAILY NEWS BULLETIN

LEADING HEALTH, POPULATION AND FAMILY WELFARE STORIES OF THE Day

Friday **20260501**

इन्हेलर का कैसे करें चुनाव

दमा, फेफड़ों से जुड़ी ऐसी बीमारी है, जिसमें इंसान ठीक से सांस नहीं ले पाता है। दमा को काबू में रखने के लिए इन्हेलर एक कारगर चिकित्सा-उपकरण है, जो दवा को सीधे फेफड़ों तक पहुंचाता है। इसके बावजूद, सही तकनीक न पता होने और कई गलतफहमियों के कारण लोग इसका पूरा लाभ नहीं ले पाते हैं। इन्हेलर का कैसे करें चुनाव और उपयोग, बता रही हैं अवंतिका सिंह

10 में से एक बच्चा दुनिया में दमा से जूझ रहा है।

13 करोड़ लोग विश्व में दमा से पीड़ित हैं। अकेले भारत में करीब 35 लाख लोग अस्थमा से जूझ रहे हैं।

स्रोत : ग्लोबल अस्थमा रिपोर्ट

[illegible]

तीन तरह के इन्हेलर

[illegible]

जरूरत और सही तरीका जानना जरूरी

[illegible]

इन्हेलर के चुनाव में ध्यान देने वाली बातें

[illegible]

भ्रांतियां और सच

[illegible]

विशेषज्ञ की राय

[illegible]

[illegible]

रख-रखाव और सफाई का रखें ध्यान

[illegible]

इन्हेलर का इतिहास

[illegible]

नेबुलाइजर और रोटाहेलर भी उपयोगी

[illegible]

अक्सर पूछे जाने वाले सवाल

[illegible]

सवाल-जवाब

न्यूरोफाइब्रोमा से घबराएं नहीं

[illegible]

हीमोग्लोबिन बढ़ाने के आसान तरीके

[illegible]

नरम और सख्त पेट का फर्क समझें

पेट की चर्बी केवल मोटापे का संकेत नहीं है। खासकर, विसरल फैट का जमा होना सेहत से जुड़े खतरों की आशंका बढ़ा सकता है।

[illegible]

जिद्दी चर्बी से बचें

[illegible]

भेजें अपने सवाल

[illegible]

भ्रम दूर एम्स के पीडियाट्रिक न्यूरोलॉजी विभाग का दावा

ऑटिज़म वाले कुछ बच्चों में कमाल की काबिलियत: AIIMS

■ NBT रिपोर्ट, नई दिल्ली

ऑटिजम का हर बच्चा अलग होता है। इसमे से कुछ बहुत खास होते हैं। ऐसी ही 6 साल की एक बच्ची ने 12वीं पास कर ली है। यह अद्भुत और बहुत ही स्पेशल है। उसे आप अपना जन्मदिन बताओ, तारीख और साल बता दो, तुरंत वह दिन बता देती है। यह दावा, एम्स की पीडियाट्रिक न्यूरोलॉजी विभाग की एचओडी डॉ. शेफाली गुलाटी ने की है। उन्होंने कहा कि हालाकि, ऐसे बच्चे केवल 2 से 3 परसेंट हैं।

ऑटिजम को लेकर आम धारणा के विपरीत डॉ. शेफाली ने कहा कि इससे ग्रसित हर बच्चा एक जैसा नहीं होता। कई मामलों में बच्चों में विशेष या असाधारण क्षमताएं भी देखी जाती हैं, जिन्हें सही दिशा देकर विकसित किया जा सकता है। डॉक्टर के अनुसार कुछ बच्चों में कैलकुलेशन स्किल बहुत ही तेज होती है, अद्भुत याददाश्त या पैटर्न पहचानने की विशेष योग्यता होती है। ऐसे उदाहरण सामने आए हैं, जहां कम उम्र के बच्चे बड़े क्लास की पढ़ाई आसानी से कर लेते हैं।

डॉक्टर ने कहा कि ऑटिजम की पहचान

और प्रबंधन में अब तकनीक बड़ी भूमिका निभा रही है। विशेषज्ञों के अनुसार, विडियो एनालिसिस, मोबाइल ऐप, आर्टिफिशल इंटेलिजेंस और रोबोटिक्स जैसे आधुनिक माध्यमों के जरिए बच्चों में ऑटिजम के शुरुआती संकेत अधिक सटीक तरीके से पहचाने जा रहे हैं।

बताया गया कि अब ऐसे टूल विकसित किए जा रहे हैं, जिनमें माता-पिता बच्चे का विडियो एक तय तरीके से रिकॉर्ड कर अपलोड कर सकते हैं। इसके बाद एल्गोरिदम के माध्यम से बच्चे के व्यवहार, आंखों की गतिविधि और प्रतिक्रिया का विश्लेषण कर जोखिम का आकलन किया जा सकता है।

'वैक्सीन और क्रोसिन से कोई संबंध नहीं'

डॉक्टर शेफाली ने कहा कि न तो कोई एक खास दवा इसे ठीक कर सकती है और न ही वैक्सीन या गर्भावस्था में ली जाने वाली सामान्य दवा जैसे क्रोसिन (पेरासिटामोल) का इससे कोई सीधा संबंध साबित हुआ है। उन्होंने कहा कि हाल के समय में कुछ दवाओं को लेकर यह धारणा बनाई जा रही है कि वे ऑटिजम में रामबाण साबित हो सकती हैं। हालाकि उपलब्ध वैज्ञानिक आंकड़ों के आधार पर यह स्पष्ट किया गया कि ऐसी दवाएं केवल सीमित और विशेष स्थितियों में ही उपयोगी हो सकती हैं, हर बच्चे के लिए नहीं।

टीकाकरण या वैक्सीन को लेकर भी स्थिति साफ की गई है। उन्होंने कहा कि ग्लोबल स्तर पर हुए अध्ययनों में यह साबित हो चुका है कि किसी भी वैक्सीन या उसमें इस्तेमाल होने वाले तत्वों का ऑटिजम से कोई संबंध नहीं है।

'जन्म के तीन वर्षों में ही दिख जाते हैं आटिज्म के लक्षण'

जागरण संवाददाता, नई दिल्ली: बच्चों में आटिज्म स्पेक्ट्रम डिसआर्डर के बढ़ते मामलों को लेकर विशेषज्ञों ने गंभीर चिंता जताई है। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) बाल रोग विभाग की डा. शेफाली गुलाटी ने कहा कि इसके लक्षण जन्म के बाद पहले तीन वर्षों में ही दिखाई देने लगते हैं, लेकिन लोग इसे गंभीरता के नहीं लेते।

डा. शेफाली गुलाटी

दिल्ली में अधिकांश मामलों में पहचान देर से हो रही है। डा. शेफाली ने बृहस्पतिवार को एम्स में आयोजित पत्रकारवार्ता में यह जानकारी साझा की। उन्होंने कहा कि आटिज्म से घबराने की नहीं, बल्कि उसे समझने और समय पर संभालने की जरूरत है। यदि पहले तीन वर्षों में ही ध्यान दिया जाए, तो प्रभावित बच्चों को बेहतर और आत्मनिर्भर जीवन की दिशा में आगे बढ़ाया जा सकता है।

पहले हजार दिन तय करते हैं बच्चे का विकास : डा. शेफाली के अनुसार बच्चे के जीवन के पहले हजार दिन (गर्भावस्था सहित) मस्तिष्क विकास के लिए सबसे संवेदनशील होते हैं। इसी दौरान तंत्रिका कोशिकाओं (न्यूरान्स) का तेजी से निर्माण होता है और उनके बीच संपर्क विकसित होते हैं। यदि इस समय आटिज्म की पहचान हो जाए और उसे ठीक करने की दिशा में पहल होने लगे तो बच्चे के व्यवहार, भाषा और सामाजिक कौशल में बेहतर सुधार संभव है।

विशेषज्ञों के पास दो से चार साल के बाद पहुंच रहे बच्चे : डा. शेफाली गुलाटी के अनुसार दिल्ली के बाल विकास केंद्रों के अनुभव बताते हैं कि अधिकांश बच्चे दो से चार साल की उम्र के बाद ही विशेषज्ञों तक पहुंचते हैं। चिंता जताई कि शुरुआती संकेतों को अधिकांशतः नजरअंदाज कर दिया जाता है। परिवार 'देर से बोलेगा, ठीक हो जाएगा' जैसी धारणा में समय गंवा देता है। डा. शेफाली गुलाटी ने कहाकि लेबल से डरने के बजाय समय पर हस्तक्षेप पर ध्यान देना जरूरी है।

पहले साल में ही मिल जाते हैं संकेत

विशेषज्ञों के अनुसार आटिज्म के शुरुआती संकेत जीवन के पहले वर्ष में ही दिख सकते हैं। नाम पुकारने पर प्रतिक्रिया न देना, आंखों में संपर्क (आइ कांटेक्ट) की कमी, सामाजिक मुस्कान का अभाव, एक साल तक इशारे (टाटा-बाय) न करना, 15 से 16 महीने तक अर्थपूर्ण शब्द न बोलना, दो साल तक दो शब्द जोड़कर न बोल पाना, पहले सीखी भाषा का अचानक गायब हो जाना, अन्य बच्चों के साथ खेलने में रुचि न लेना, बार-बार एक ही व्यवहार दोहराना। विशेषज्ञों के अनुसार, वैश्विक स्तर पर आटिज्म के मामलों में लगातार वृद्धि देखी जा रही है और अब लगभग हर 100 में एक बच्चा प्रभावित है।

सरल है पहचान, जरूरी है समाज में जागरूकता लाना

डा. शेफाली ने बताया कि कि आटिज्म की पहचान किसी जटिल जांच से नहीं, बल्कि माता-पिता से बातचीत, बच्चे के व्यवहार के अवलोकन के आधार पर की जाती है। यदि समय पर जांच करना और हस्तक्षेप ही इसका सबसे प्रभावी उपाय है।

रिपोर्ट | चार देशों में 30 हजार से अधिक लोगों पर किया गया शोध, तीन चौथाई लोगों ने माना खराब पर्यावरण स्वास्थ्य के लिए घातक

जलवायु परिवर्तन से सेहत पर खतरे ने चिंता बढ़ाई

नई दिल्ली, विशेष संवाददाता। जलवायु परिवर्तन को समझाने के कई तरीके हैं जिनमें तापमान, कार्बन उत्सर्जन, ग्लेशियरों के पिघलने तथा समुद्र का जलस्तर बढ़ने को लेकर चिंताएं शामिल हैं। लेकिन एक नए अध्ययन में दावा किया गया है कि जब इसके स्वास्थ्य पर खतरों की बात की जाती है तो लोग न सिर्फ गहराई से इस खतरे को समझते हैं, बल्कि तुरंत प्रतिक्रिया भी देते हैं।

वेलकम ट्रस्ट और क्लाइमेट ओपिनियन रिसर्च एक्सचेंज के अध्ययन में पाया गया कि जब लोगों को बताया जाता है कि जलवायु परिवर्तन उनकी सेहत को कैसे प्रभावित कर रहा है, तो वे सरकार से कार्रवाई की मांग करने में ज्यादा सक्रिय होते हैं।

यह शोध ब्राजील, भारत, जापान और दक्षिण अफ्रीका में 30 हजार से अधिक लोगों पर आधारित है। अध्ययन का निचोड़ यह है कि जलवायु परिवर्तन अब सिर्फ पर्यावरण की चिंता नहीं रह गया है, बल्कि यह लोगों के शरीर, उनकी सांस, उनके बच्चों की सेहत की चिंताओं तक पहुंच गया है।

80 प्रतिशत लोग खतरों को लेकर गंभीर

इन चारों देशों में 80 प्रतिशत से ज्यादा लोग पहले से ही जलवायु परिवर्तन को लेकर चिंतित हैं। लगभग तीन-चौथाई लोगों को यह अहसास है कि यह उनकी सेहत को प्रभावित कर रहा है। लेकिन जैसे ही इस खतरे को और साफ तरीके से बताया जाता है, समर्थन और तेज हो जाता है।

- वेलकम ट्रस्ट और क्लाइमेट ओपिनियन रिसर्च एक्सचेंज के शोध में खुलासा

बच्चों के विकास पर भी असर

दिल्ली एम्स में कम्युनिटी मेडिसिन के डॉक्टर हर्षल रमेश साल्वे कहते हैं कि वायु प्रदूषण भारत में जलवायु परिवर्तन से जुड़े संकट का सबसे अधिक दिखने वाला चेहरा है। यह सांस की बीमारियों से लेकर दिल की समस्याओं तक के लिए जिम्मेदार है और बच्चों के विकास को भी प्रभावित कर सकता है। यह जनस्वास्थ्य और जलवायु दोनों ही दृष्टिकोण से इसकी रोकथाम को जरूरी कदम उठाने की जरूरत जताते हैं।

भारत में साफ हवा की चिंता सबसे अधिक

रिपोर्ट के अनुसार भारत में यह चिंता सबसे ज्यादा हवा और स्वास्थ्य सेवाओं के इर्द-गिर्द दिखती है। 66 प्रतिशत लोग चाहते हैं कि सरकार जलवायु परिवर्तन के मुद्दे पर और काम करे। वहीं, 74 प्रतिशत लोग मानते हैं कि स्वास्थ्य पर पड़ने वाले असर से बचाने के लिए तुरंत कदम उठाने चाहिए।

कीटनाशक का इस्तेमाल बढ़ा रहा ऑटिज्म

अध्ययन

नई दिल्ली, प्रमुख संवाददाता। ऑटिज्म की बीमारी बढ़ रही है। इसके लिए आनुवांशिक और जेनेटिक कारण तो है ही खानपान की चीजों में कीटनाशक का बढ़ता इस्तेमाल भी इसकी वजह बन रहा है।

ऑटिज्म जागरुकता माह के मद्देनजर एम्स के पीडियाट्रिक न्यूरोलॉजी की प्रभारी डॉ. शैफाली गुलाटी ने यह जानकारी दी। उन्होंने बताया कि अमेरिका में हुए एक अध्ययन के अनुसार, हर 31 में एक बच्चे को ऑटिज्म है। एम्स के नेतृत्व में वर्ष 2011 में हुए एक अध्ययन में पाया गया था कि भारत में हर 89 में से एक बच्चे को ऑटिज्म है, लेकिन इसके बाद कोई अध्ययन नहीं हुआ। लड़कियों की तुलना में लड़के साढ़े चार गुना अधिक पीड़ित होते हैं। ऑटिज्म की समस्या बढ़ने के कई कारण है। खानपान में कीटनाशक और ऑटिज्म की समस्या को लेकर एम्स में अध्ययन चल रहा है। इसके शुरुआती नतीजों में ऑटिज्म पीड़ित बच्चों में कीटनाशक की मात्रा सामान्य बच्चों से अधिक पाई गई है। एक अन्य अध्ययन में ऑटिज्म पीड़ित बच्चों के पिता के आनुवांशिक पदार्थ की गुणवत्ता खराब पाई गई। ऐसे में देर से शादी भी बच्चों में ऑटिज्म जैसी बीमारी में कारण बन रहा है। इसके अलावा प्रदूषण से भी इसका जोखिम है। इसके अलावा एम्स में चाईं में भर्ती बच्चों पर किए गए एक अध्ययन में पाया गया है कि ऑटिज्म से पीड़ित तीन वर्ष की उम्र के बच्चों का स्क्रीन टाइम अन्य बच्चों की तुलना में अधिक था। ऐसे बच्चे एक वर्ष या उससे कम कम उम्र में ही मोबाइल पर वीडियो देखना शुरू कर देते हैं।

80 प्रतिशत बच्चों में एक से अधिक समस्याएं : ऑटिज्म से पीड़ित बच्चो में मिर्गी, ध्यान में कमी, व्यवहार से संबंधित परेशानी, नींद नहीं आने जैसी कई समस्या होती है, लेकिन हर बच्चे में समस्या अलग-अलग होती है। एम्स में ऑटिज्म से पीड़ित 2000 से अधिक बच्चों पर किए गए मूल्यांकन में पाया गया है कि 80 प्रतिशत बच्चों को एक से अधिक समस्या होती है।

शुरुआती दौर में बीमारी की पहचान जरूरी

शुरुआती तीन वर्ष में ही मस्तिष्क में न्यूरॉन अधिक बनते है, इसलिए बीमारी की पहचान होने से बच्चे के इलाज और देखभाल का परिणाम बेहतर होगा। एम्स ने एक से 18 माह की उम्र के बच्चों की स्क्रीनिंग के लिए एक टूल बनाया है, जो 12 माह के 90 प्रतिशत बच्चों मे और 18 माह तक के 98.7 प्रतिशत बच्चों मे ऑटिज्म की स्क्रीनिंग कर पाने में सक्षम है।

इस तरह के लक्षण दिखे तो डॉक्टर से संपर्क करें

- छह माह का बच्चा अपना नाम सुनकर प्रतिक्रिया नहीं दे रहा
- आंख का संपर्क नहीं करता हो
- एक वर्ष की उम्र में टाटा बाय बाय या बड़बड़ाता नहीं हो
- डेढ़ वर्ष उम्र तक एक शब्द भी ठीक से नहीं बोल पाता हो
- दो वर्ष में दो शब्द को जोड़कर नहीं बोल पाए

टैक्स ज्यादा भी देना पड़ सकता है।

150 रुपये वेतन का हिस्सा माना जाएगा और उस पर कर लगेगा।

नहीं दिखेगा

अनुलाभ में शामिल ह
बैंकअप को जांचना

पेंशनर को यह भत्ता स्वचालित तरीके से बिना कागजी प्रक्रिया या आवेदन के मिलेगा

राहत: एनपीएस में अब सीधे बैंक खाते में आएगा चिकित्सा भत्ता

नई दिल्ली, एजेंसी। केंद्र सरकार ने राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली (एनपीएस) के तहत आने वाले पेंशनरों के लिए बड़ा फैसला लिया है। अब उन्हें निश्चित चिकित्सा भत्ता पाने के लिए कोई बिल या दावा जमा नहीं करना पड़ेगा। यह राशि सीधे उनके बैंक खाते में भेजी जाएगी।

वित्त मंत्रालय ने हाल ही में इस संबंध में आदेश जारी किया है। इसके मुताबिक, राष्ट्रीय पेंशन प्रणाली के पात्र पेंशनर और पारिवारिक पेंशनर को यह भत्ता स्वचालित तरीके से मिलेगा यानी अब पहले की तरह कागजी प्रक्रिया या आवेदन की जरूरत नहीं होगी।

नई व्यवस्था में पेंशन देने वाले बैंक अपनी सेंट्रल पेंशन प्रोसेसिंग इकाइयों के जरिए यह भुगतान करेंगे। इसके लिए पहले केंद्रीय पेंशन लेखा कार्यालय (सीपीएओ) पात्रता की जांच करेगा और बैंक को अनुमति देगा, जिसके बाद पैसा सीधे खाते में जमा कर दिया जाएगा। *विशेषज्ञों के मुताबिक, इस फैसले से* बुजुर्ग पेंशनरों को बड़ी राहत मिलेगी, क्योंकि अब उन्हें मेडिकल बिल जमा कराने या दफ्तरों के चक्कर लगाने की जरूरत नहीं पड़ेगी। साथ ही, भुगतान तेज और पारदर्शी होगा।

मृत्यु के बाद परिवार के लिए क्या है नियम

सरकार ने परिवारों के लिए प्रक्रिया भी आसान रखी है। अगर किसी पेंशनभोगी की मृत्यु हो जाती है और पात्र परिवार के सदस्य का नाम पहले से दर्ज है, तो वे मृत्यु प्रमाणपत्र के साथ सीधे बैंक में आवेदन कर सकते हैं और उन्हें चिकित्सा भत्ता मिलना शुरू हो जाएगा। वहीं, अगर नाम रिकॉर्ड में नहीं है, तो संबंधित विभाग के जरिए नई मंजूरी लेनी होगी।

ओपीडी सेवा चुनने का विकल्प उपलब्ध होगा

इसके अलावा, पेंशनभोगियों के पास यह विकल्प भी है कि वे तय चिकित्सा भत्ते की जगह केंद्रीय कर्मचारी स्वास्थ्य योजना (सीजीएचएस) की ओपीडी सुविधा चुन सकते हैं। इस व्यवस्था में बैंक पहले भत्ते का भुगतान करेंगे और बाद में सरकार उन्हें इसकी प्रतिपूर्ति करेगी। इसका मकसद प्रक्रिया को आसान बनाना और पेंशनभोगियों को कागजी झंझट से राहत देना है।

जीवन प्रमाणपत्र देना अनिवार्य रहेगा

सरकार ने साफ किया है कि पेंशनभोगियों को हर साल नवंबर में अपना 'जीवन प्रमाणपत्र' जमा करना होगा, जिसे वे डिजिटल तरीके से या बैंक जाकर दे सकते हैं। अगर यह प्रमाणपत्र नवंबर में जमा नहीं किया गया, तो दिसंबर से पेंशन और चिकित्सा भत्ते के भुगतान पर असर पड़ सकता है।

अभी क्या नियम हैं?

यह निश्चित चिकित्सा मेडिकल अलाउंस (निश्चित चिकित्सा भत्ता) पहले से ही केंद्र सरकार के पेंशनरों को मिलता है। इसके तहत हर महीने तय रकम (फिलहाल ₹1000 प्रति माह) दी जाती है। शर्त यह होती है कि पेंशनर केंद्र सरकार स्वास्थ्य सेवा योजना यानी सीजीएचएस की ओपीडी सुविधा न ले रहा हो।

हर तीन महीने में आएगा पैसा: सरकार ने यह भी तय किया है कि यह राशि हर तीन महीने (तिमाही) में खाते में जमा की जाएगी, ताकि पेंशनरों को नियमित रूप से लाभ मिलता रहे। अगर कोई पेंशनभोगी अपना बैंक या ब्रांच बदलता है, तो ट्रांसफर की प्रक्रिया मौजूदा सीपीएओ दिशानिर्देशों के अनुसार होगी।

NBT

अजवाइन का नैनो कवच

वैज्ञानिकों ने तैयार की कमाल की हर्बल पट्टी

AI Image

■ सैयद सना, लखनऊ

चोट लगने या बड़े ऑपरेशन के बाद होने वाले घाव और जिद्दी इन्फेक्शन को ठीक करने में अब हफ्तों का इंतजार नहीं करना होगा। लखनऊ के वैज्ञानिकों ने एक ऐसी 'नैनो-ड्रेसिंग' (हर्बल पट्टी) विकसित की है, जो न केवल घाव को तेजी से सुखाएगी, बल्कि एंटी-बायोटिक्स को बेअसर करने वाले 'सुपरबग्स' का भी सफाया कर देगी। इस पट्टी की सबसे बड़ी खासियत इसमें इस्तेमाल हुआ थाइम (अजवाइन का तेल) है, जो अपने औषधीय गुणों के लिए जाना जाता है। संस्थान के निदेशक डॉ.

12 से 24 घंटे में खत्म होंगे बैक्टीरिया, इन्फेक्शन का खतरा 95% कम

ऐके शासनी के मार्गदर्शन में हुए इस शोध में डॉ. आराधना मिश्रा और डॉ. चेतना के साथ पीएचडी स्टूडेंट प्रिया वर्मा की भी अहम भूमिका रही। इस महत्वपूर्ण रिसर्च को दुनिया के प्रतिष्ठित जर्नल 'इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बायोलॉजिकल मैक्रोमोलेक्यूल्स' में स्थान मिला है। इसमें जिलेटिन-रिइंफोर्स्ड PCL नैनोफाइबर्स का उपयोग हुआ है, जिसे विकसित करने में AMPRI भोपाल की डॉ. चेतना का विशेष सहयोग रहा।

नैनो-फाइबर और इलेक्ट्रोस्पिनिंग का कमाल: CSIR-NBRI लखनऊ की वरिष्ठ प्रधान वैज्ञानिक डॉ. आराधना मिश्रा ने बताया कि यह एक हर्बल नैनो मटीरियल मेट है। इसे बायोडिग्रेडेबल नैनो फाइबर से तैयार किया गया है।

नहीं चिपकेगी पट्टी

अक्सर सामान्य पट्टियां घाव से चिपक जाती हैं, जिससे पट्टी बदलते समय दर्द होता है। लेकिन यह हाइब्रिड पट्टी हाइड्रोफिलिक है। यह नमी सोखती है और घाव को 'ब्रीदिंग स्पेस' (सांस लेने की जगह) देती है। इसका वॉटर कांटेक्ट एंगल 115 से घटकर 38 रह गया है, जो विशेषज्ञ विज्ञान में घाव भरने के लिए सबसे आदर्श स्थिति मानी जाती है।

तकनीक: इसे 'इलेक्ट्रोस्पिनिंग' तकनीक से बनाया गया है।

बनावट: इसमें जिलेटिन-रिइंफोर्स्ड PCL नैनोफाइबर्स का उपयोग हुआ है, जिसे विकसित करने में AMPRI भोपाल की डॉ. चेतना का विशेष सहयोग रहा।

खूबी: यह पट्टी दिखने में बिल्कुल मानव शरीर की कोशिकाओं (ईसीएम) जैसी है, जिससे घाव भरने की प्राकृतिक प्रक्रिया तेज हो जाती है।

बैक्टीरिया पर सर्जिकल स्ट्राइक: शोध के अनुसार, यह पट्टी MRSA (मल्टी-ड्रग रेसिस्टेंट बैक्टीरिया) और ई-कोलाई जैसे खतरनाक कीटाणुओं को मात्र 12 से 24 घंटे के भीतर खत्म कर देती है।

बायोफिल्म पर प्रहार: घावों पर जमने वाली बैक्टीरिया की चिपचिपी परत (बायोफिल्म) को यह 95% तक रोक देती है।

राहत: घाव के आसपास होने वाली जलन और ऑक्सीडेटिव स्ट्रेस को कम करने में यह 90% से ज्यादा असरदार है।

जानकारी

आयोजन बाल तंत्रिका विज्ञान प्रभाग और बाल रोग विभाग के सहयोग से किया गया

बचपन में ऑटिज्म की पहचान से इलाज संभव

अमर उजाला ब्यूरो

नई दिल्ली। ऑटिज्म जागरूकता माह के अवसर पर बृहस्पतिवार को अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान (एम्स) में सार्वजनिक स्वास्थ्य व्याख्यान का आयोजन किया गया।

ऑटिज्म जागरूकता माह हर वर्ष अप्रैल में विश्वभर में मनाया जाता है और इस वर्ष की संयुक्त राष्ट्र थीम ऑटिज्म और मानवता : हर जीवन का महत्व है। यह आयोजन बाल तंत्रिका विज्ञान प्रभाग और बाल रोग विभाग के सहयोग से किया गया। कार्यक्रम में ऑटिज्म स्पेक्ट्रम डिसऑर्डर (एएसडी) की जटिलताओं, सह-रुग्णताओं और शुरुआती पहचान के महत्व पर विस्तार से चर्चा की गई।

2000 से अधिक बच्चों का मूल्यांकन, लगभग 80 फीसदी में मिर्गी की शिकायत

कई कारकों पर शोध जारी

प्रो. गुलाटी ने बताया कि पर्यावरणीय कारण, जीवनशैली और शहरीकरण जैसे कारक इसमें भूमिका निभा सकते हैं। कारणों पर शोध जारी है और इन्हें खोजे तौर पर ऑटिज्म का कारण नहीं माना गया है। इनपर शोध जारी है। कार्यक्रम में बताया गया कि जिन बच्चों में हाइपरएक्टिविटी और नींद की समस्या अधिक होती है, उनमें कार्यात्मक चुनौतियां बढ़ सकती हैं। ऐसे मामलों में बहु-विषयक देखभाल और मनोसामाजिक सहयोग बेहद जरूरी है।

बाल तंत्रिका विज्ञान प्रभाग और बाल रोग विभाग की प्रभारी प्रो. शेफाली गुलाटी ने बताया कि एएसडी एक न्यूरो-विकासात्मक विकार है, जिसकी पहचान आमतौर पर 12-18 महीने की उम्र में संभव होती है। उन्होंने सेंटर फॉर डिजीज कंट्रोल एंड प्रिवेंशन के 2025 के अनुमान का हवाला देते हुए बताया कि हर 31 में से 1 व्यक्ति में इसका निदान पाया जाता है।

एम्स के बाल तंत्रिका विज्ञान प्रभाग के आंकड़ों के अनुसार, 2000 से अधिक बच्चों का मूल्यांकन में लगभग 80 फीसदी में मिर्गी, ध्यान की कमी, व्यवहार संबंधी समस्याएं और नींद से जुड़ी दिक्कतें जैसी सह-रुग्णताएं पाई गई हैं।